आंवलखेड़ा का पूर्णाहुति महायज्ञ (1995)

आंवलखेड़ा का पूर्णाहुति महायज्ञ

आंवलखेड़ा पूर्णाहुति महायज्ञ से सम्बंधित इतना विशाल साहित्य (लेख,ऑडियो,वीडियो) उपलब्ध है कि सभी का अध्ययन करना और किसी एक प्रकाशन में शामिल करना एक बहुत ही विशाल कार्य हो सकता है। पाठकों के कार्य को सरल करने एवं सरलता से समझ पाने की दिशा में लेखक का एक छोटा सा प्रयास है। यह प्रकाशन पाठकों के लिए तभी लाभदायक हो सकता है जब साथ में दिए गए वीडियो लिंक्स को भी ध्यानपूर्वक पूर्ण श्रद्धा के साथ देखा जाए।

Video1   Video 2   Video recorded by us

ढेरों संस्थाएँ प्रतिवर्ष भव्य आयोजन करती रहती हैं। करोड़ों का धन भी लगाया जाता है लेकिन एक ऐसा आयोजन जिसमें छोटे-बड़े, हर जाति, वर्ग, सम्प्रदाय के व्यक्ति की शक्ति लगी हुई हो,आध्यात्मिक ऊर्जा से अनुप्राणित हो, वह “आँवलखेड़ा का पूर्णाहुति महायज्ञ ” आयोजन ही कहा जाएगा।

इस आयोजन के रूप में शांतिकुंज की चौबीस वर्ष की सतत् साधना पूर्ण हुई। शाँतिकुँज के लिए इन पिछले चौबीस वर्षों का प्रत्येक वर्ष उसके संस्थापक के चौबीस पुरश्चरणों वाले, चौबीस वर्षों का अन्तिम अध्याय था, इसी के साथ “तरुण तपस्वी शाँतिकुँज” ने अपने पच्चीसवें वर्ष रजत जयन्ती वर्ष में प्रवेश किया।

इस आयोजन का आरम्भ 1 नवम्बर, 1994 को वन्दनीय माता जी के शक्ति कलश की स्थापना से हुआ। यह शक्ति कलश युगतीर्थ शाँतिकुंज हरिद्वार से चलकर भारत की राजधानी दिल्ली होता हुआ आँवलखेड़ा लाया गया था। दिल्ली के तालकटोरा स्टेडियम में 30 अक्टूबर 1995 के दिन लोकसभा के तत्कालीन अध्यक्ष श्री शिवराज पाटिल, प्रतिपक्ष नेता श्री अटल बिहारी बाजपेई, श्री नरेन्द्र मोहन,संस्थापक दैनिक जागरण एवं श्री मणिशंकर अय्यर, सुप्रसिद्ध पत्रकार एवं साँसद के द्वारा चढ़ाए गए श्रद्धा सुमन एवं 15000 परिजनों की भावांजलि के पश्चात् यह यात्रा आंवलखेड़ा में संपन्न हुई थी।

कलश यात्रा के दिन से ही एक वर्ष का अखण्ड जप अनुष्ठान गायत्री शक्तिपीठ परिसर में प्रारम्भ हो गया। सूक्ष्म जगत के परिशोधन एवं महाप्रज्ञा के अभेद सुरक्षा कवच निर्माण के निमित्त यह अनुष्ठान वर्ष भर (1994-95) चलता रहा। इस पूरे एक वर्ष में परिजनों को अनेकानेक प्रकार की अनुभूतियाँ होती रहीं । वह जन्मभूमि जहाँ 1911 के वसंत वाले दिन हमारी आराध्य गुरुसत्ता प्रकट हुई थी, इस एक वर्ष के आरम्भ से ही एक तीर्थ का रूप लेने लगी। आँवलखेड़ा नामक इस छोटे से, 4000 की आबादी वाले गाँव में जब इतने बड़े आयोजन की बात उठती है तो सभी हैरत में पड़ जाते हैं। सभी का एक ही प्रश्न है: आखिर कैसे और किस तरह हो सकेगा यह सब?

इस प्रश्न का सार्थक समाधान प्रस्तुत करने का श्रेय गायत्री परिवार के समर्पित इंजीनियर कार्यकर्त्ताओं को जाता है जिनके सही विज्ञानसम्मत विधि से किए गए सर्वेक्षण एवं निर्माण कार्य ने जन्मभूमि स्मारक से लेकर चौबीस नगरों, भोजनालयों, कलामंच, ज्ञानमंच, देवमंच, संस्कारमंच तथा विचारमंच से लेकर भव्य प्रदर्शनी तक का रूपांतरण कर दिया। इस समूचे निर्माण को देखकर विश्वकर्मा जैसे ईश्वरीय वास्तुकार द्वारा किए निर्माण कार्य की पौराणिक कथाएँ जीवित हो उठती थीं। देखने वालों को लगता था कुछ इसी तरह इन्द्र की सुधर्मा सभा द्वारिकापुरी का निर्माण हुआ होगा।

इस कार्य में सबसे बड़ी समस्या थी निर्माण स्थल पर खड़े बाजरे के खेत। कैसे वह फसल कटे, कैसे वह खेत

इस योग्य बनें कि वहाँ निर्माणकार्य आरम्भ हो सके। इसके लिए आए हुए इंजीनियर साथियों से लेकर लगभग 5000 से अधिक समयदानियों ने पन्द्रह दिन से भी कम अवधि में सारी फसल काटकर किसानों के पास पहुँचाने तथा उन स्थानों पर रोलर्स चलाकर समतल बनाने का पुरुषार्थ सम्पन्न किया। ये पंक्तियाँ पढ़ने में जितनी आसान लगती हैं उतनी है नहीं। यह कार्य कोई छोटा-मोटा बागवानी का काम नहीं था। अगस्त, सितम्बर की कड़ी धूप में खड़ी फसल को काटकर इंजीनियर भाइयों के कार्य को सुगम बनाने का कार्य था। समतल होने तक ही कठिन था ,उसके बाद तो अस्थाई टीन शेड बनते ही चले गए। सबसे पहले स्वयंसेवक नगर बना और भोजनालय चलने लगा।

इसके साथ ही पूरे क्षेत्र के आसपास के गाँवों में दीवार लेखन, गाँव की सफाई आदि कार्य भी चलते रहे।

इस भावनासिक्त श्रमदान की कोई कीमत नहीं लगाई जा सकती। गुरुनिष्ठा से उपजा यह श्रमदान हमेशा-हमेशा मिशन के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में चमकता रहेगा। श्रमदान जितना भावभरा थी, उतना ही श्रद्धा से ओत-प्रोत था आंवलखेड़ा की पुण्य भूमि के किसानों का सहयोग। आंवलखेड़ा और आस-पास के सभी गाँवों के किसानों ने भावभरे स्वर में कहा,

"हम अपनी नियमित फसल की बुवाई नहीं करेंगे, पुरा ढाई हजार एकड़ का क्षेत्र आपके लिए है, आप जैसा चाहे उपयोग करना चाहे करें। कार्यक्रम यहीं होना चाहिए।”

भावना का प्रवाह कुछ ऐसा था कि उस्मानपुर ग्राम ने तो सर्वसम्मति से अपना नाम श्रीरामपुर कर लिया।

यह कथा निर्माण काल की है। इस बीच अखण्ड जप निरंतर चलता रह। जिस पावन स्थली पर आश्विन कृष्ण त्रयोदशी 20 सितम्बर, 1911 के पावन दिन परम पूज्य गुरुदेव का अवतरण हुआ था, उसी परिसर में इस अवसर पर एक भव्य कीर्ति स्तम्भ की स्थापना हुई। कीर्ति स्तम्भ के शीर्ष पर ज्ञानयज्ञ की लाल मशाल जो संघ शक्ति की प्रतीक है, स्थापित की गई । इसी परिसर के पिछले हिस्से में बने एक भव्य कक्ष में पूज्यवर के जीवनरूपी विशाल सागर मंथन के निकले चौदह रत्नों के रूप में उनकी जीवन यात्रा के चरणों को चौदह शीर्षकों में बाँटकर काले ग्रेनाइट पत्थर पर

सुनहरे अक्षरों में उकेरा गया है। पूज्यवर एवं माताजी के बड़े आकार के चित्र भी यहाँ लगाए गए हैं। आज 2023 में बहुत कुछ बदल चुका है। पाठकों को लेखक द्वारा शूट की गयी 2019 की वीडियो देखकर अतिरिक्त जानकारी मिल सकती है।

https://youtu.be/kXQ9LxfROWI

इस कीर्तिस्तम्भ को भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिंह राव ने 1 नवम्बर की अपराह्न वेला में राष्ट्र में समर्पित किया। वे विशेष रूप से उसके लिए वायुसेना के विमान से आगरा आए और आगरा से हैलिकॉप्टर द्वारा आँवलखेड़ा में तब आए थे जब स्वयं उन्हें अगले दिन एक लम्बी विदेशयात्रा पर रवाना होना था। उनके साथ पूर्व रक्षा राज्य मंत्री श्री सुरेश पचौरी,

पूर्व जल संसाधन एवं संसदीय कार्य मंत्री श्री विद्याचरण शुक्ल, श्री रामलाल राही, श्री भुवनेश्वर चतुर्वेदी, श्री अरविन्द नेताम, उ.प्र. के तत्कालीन राज्यपाल श्री मोतीलाल वोरा एवं अखिल भारतीय काँग्रेस समिति के महासचिव श्री माधव सिंह सोलंकी एवं जनार्दन पुजारी भी थे। इतना बड़ा काफिला एवं उसके साथ जुड़ी सुरक्षा व्यवस्था आने से परिजनों को कुछ असुविधा भी हुई किन्तु वह थोड़ी देर को थी। तत्कालीन प्रधानमंत्री जी का यह काफिला पूज्यवर की विराट जीवन प्रदर्शनी, आदर्श ग्राम आंवलखेड़ा का मॉडल देखकर जन्मभूमि की ओर बढ़ा वहाँ से प्रवचन मंच पर आया। वहाँ श्री राव ने स्मारिका का विमोचन करने के पश्चात् दिए गए अपने उद्बोधन में इस यात्रा को

एक आध्यात्मिक यात्रा बताया और राष्ट्र निर्माण में गायत्री परिवार के योगदान की सराहना की।

पूर्णाहुति महायज्ञ के देव पूजन के क्रम में वयोवृद्ध स्वामी कल्याणदेव ने आकर सभी को विभोर कर दिया। शक्रताल (मुजफ्फर नगर) गंगातटवासी संत श्री कल्याणदेव जी लगभग 108 वर्ष से अधिक आयु के हैं। पूज्य गुरुदेव सही अर्थों में ब्राह्मण की परिभाषा करते हुए सबसे प्रथम उन्हीं का उदाहरण देते रहे है। अथर्व वेद की उक्ति “जीवेम् शरदः शतम्” जिसका अर्थ है आप सौ शरद ऋतु तक दीर्घायु हों की उक्ति को चरितार्थ करते स्वामी जी सभी के प्रेरणा के स्रोत हैं। पूज्यवर एवं माताजी के चित्रों पर पुष्पांजलि अर्पित कर देवमंच से उन्होंने भावभरे शब्दों में कहा,

“मैं तो मात्र आचार्य जी एवं उनके क्रियाकलापों के यज्ञीय जीवन के दर्शन हेतु मथुरा जाता था। मेरा उनका सम्बन्ध तो कृष्ण सुदामा के समान था। उनके निर्देशानुसार मैंने भी अपने क्षेत्र में लगभग 100 यज्ञ कराए।”

संत श्रेष्ठ स्वामी जी ही देवमंच से बोले । बाकी जो भी अतिथि अभ्यागत आए, organisers ने उनके बोलने की व्यवस्था विचारमंच से की थी।

1 नवंबर, 1995 को पूर्व प्रधानमंत्री व उनके साथ आए मंत्रीगणों के अतिरिक्त 3 नवम्बर को काँग्रेस के कार्यकारी अध्यक्ष श्री अर्जुन सिंह, 4 नवम्बर को साँसद श्री नारायण दत्त तिवारी, भारत सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण सचिव श्री जगदीशचंद्र पन्त, 6

नवम्बर को म.प्र. मुख्यमंत्री श्री दिग्विजयसिंह एवं राज्यपाल श्री मो. शफी कुरैशी पधारे। 6 नवम्बर को ही राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सहकार्य वाहक श्री सुदर्शन भी विशेष रूप से अपने व्यस्त कार्यक्रमों के बीच आए। 7 नवम्बर के दिन जो पूर्णाहुति का दिन था, अन्तिम दिन था, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सरसंघ चालक प्रो. राजेन्द्र सिंह ने आकर यज्ञशाला में हवन किया, संयोजन मण्डल से मिले तथा प्रदर्शनी देखकर प्रसन्न मन से अपने अगले कार्यक्रम की ओर चले गए।

प्रथम पूर्णाहुति महायज्ञ के इस कार्यक्रम में सम्पूर्ण यज्ञ नगर में पाँच मंच स्थापित थे। देवमंच, संस्कारमंच एवं ज्ञानमंच तीनों में आध्यात्मिक उद्बोधनों, निर्देशों एवं प्रेरणा देने का क्रम चला। विचारमंच एवं कलामंच

अलग उद्देश्यों के लिए बनाए गए थे। पूरे सात दिन प्रायः बीस से पच्चीस लाख व्यक्ति प्रतिदिन इस यज्ञनगर में आते रहे व इन मंचों से प्रवाहित ज्ञानगंगा में स्नान कर लाभ लेते रहे।

देवमंच 1251 कुण्डीय यज्ञशाला के शीर्ष पर स्थित था जहाँ से कलश यात्रा के बाद हुई 3 नवंबर की कलश स्थापना से लेकर 7 नवंबर की पूर्णाहुति तक भाई बहिनों द्वारा समग्र आयोजन होते रहे। विगत 1000 वर्ष के इतिहास में सम्भवतः पहली बार नारी शक्ति द्वारा इतने बड़े महायज्ञ का संचालन किया गया।

गुरु ग्राम में दीक्षा लेने का विशेष महत्व समझते हुए 5-6 नवम्बर को तीस-तीस हजार नए परिजनों के अतिरिक्त हज़ारों पुराने परिजनों ने पुनः दीक्षा ली।

विशिष्ट संस्कारों के क्रम में वेद स्थापना का क्रम भी तीनों दिन सम्पन्न हुआ। सस्वर मंत्र पाठ व भावपूर्ण संगीत के साथ ब्रह्मवादिनी बहिनों एवं भाइयों द्वारा पुंसवन, नामकरण, अन्नप्राशन, मुण्डन, विद्यारम्भ आदि संस्कार भी सम्पन्न होते रहे। इसके अतिरिक्त 108 आदर्श विवाह, 1200 वानप्रस्थ संस्कार भी सम्पन्न हुए।

ज्ञानमंच-बैकड्राप के रूप में जन्मस्थली की झलकियाँ व परम पूज्य गुरुदेव के विराट् व्यक्तित्व को दर्शाती एक फोटो प्रदर्शनी थी । गुरुसत्ता के प्रतीक के रूप में बीच में एक भव्य सिंहासन पर गुरुदेव एवं माताजी की पादुकाएँ थी। प्रतिनिधि रूप में श्रद्धेय पंडित लीलापति जी शर्मा, डॉ. प्रणव पण्ड्या ने अपने विचार इस मंच से

व्यक्त किए। इसी मंच से भव्य विराट् दीपयज्ञ का संचालन भी किया गया।

विचारमंच केन्द्रीय कार्यालय के सामने आगरा रोड पर बनाया गया था। पत्रकार नगर भी पास में ही था। अतः सारे भारत से आए पत्रकार इसमें सतत् उपस्थित रहे। विचार मंच से विचार क्रान्ति का स्वर गुंजायमान करने वाले स्वर मुखरित होते रहे। मुख्य रूप से इसका स्वरूप एक विचार गोष्ठी का था। कोई एक नहीं 5-6 वक्ता निर्धारित विषय पर अपने विचार व्यक्त करते गए।

कलामंच न केवल क्षेत्रीय स्तर की प्रतिभाओं के लिए एक ऐतिहासिक अवसर था बल्कि जन-जन के लिए एक स्वस्थ मनोरंजन का स्वरूप लेकर सामने आया। पूज्यवर चाहते थे कि लोकरंजन से लोकमंगल के लिए लोक

कला को पुनर्जीवित किया जाए। यह भूमिका कलामंच ने पूरी तरह निभाई। शाँतिकुँज के समर्पित युवा कार्यकर्त्ता श्री उमाकान्त सिंह के सूत्र संचालन में प्रतिभाओं के mesmerizing प्रदर्शन ने दर्शकों का दिल जीत लिया।

एक विशाल प्रदर्शनी इस विराट् आयोजन की सर्वाधिक आकर्षक केन्द्र बिन्दु थी । यह कई भागों में बँटी थी किन्तु प्रत्येक भाग अपने में परिपूर्ण था। इस प्रदर्शनी में गुरुदेव-माताजी के निर्धारण, जीवन दर्शन के विविध कार्यक्रमों की मनोरम झाँकी प्रदर्शित की गई थी। समर्पित कलाकारों द्वारा बनायी गई महाकाल की विराट प्रतिमा सर्वाधिक आकर्षक का केन्द्र बिन्दु थी। इस प्रदर्शनी को देखने वाले अनायास ही पूज्यवर के

विचारों एवं जीवनक्रम को अपने अन्तःकरण की गहराइयों में धारण करते देखे गए।

पूर्णाहुति महायज्ञ के इस कार्यक्रम में मीडिया प्रशासन की भूमिका के बारे में जितना कहा जाय कम ही होगा। सभी ने यथायोग्य अपनी शक्ति अनुसार इसमें योगदान दिया। इस आयोजन की पूर्णता तो सन् 2001 में हुई मानी जाएगी लेकिन इतना अवश्य कहना होगा कि इस आयोजन के रूप में शांतिकुंज की चौबीस वर्ष की सतत् साधना पूर्ण हुई। शाँतिकुँज के लिए इन पिछ्ले चौबीस वर्षों का प्रत्येक वर्ष उसके संस्थापक के चौबीस पुरश्चरणों वाले, चौबीस वर्षों का अन्तिम अध्याय था, इसी के साथ “तरुण तपस्वी शाँतिकुँज” ने अपने पच्चीसवें वर्ष रजत जयन्ती वर्ष में प्रवेश किया।